मीरा के काव्य में आध्यात्मिक एवं दार्शनिक चेतना का अध्ययन

विकास सिंह
शोधार्थी -हिंदी
rajpurohitvikas@gmail.com

सारांश-
संत-कवयित्री मीराबाई का काव्य भारतीय साहित्य एवं दर्शन में एक विशिष्ट स्थान रखता है। उनकी पदावलियाँ एक गहन आध्यात्मिक साधना एवं दार्शनिक चिंतन का प्रतिबिंब हैं। यह शोध पत्र मीरा के काव्य में निहित आध्यात्मिक एवं दार्शनिक चिंतन का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। इसमें मीरा की भक्ति-भावना को 'माधुर्य भाव' की अद्वितीय अभिव्यक्ति के रूप में देखा गया है। जहाँ प्रेम की सांसारिक अभिव्यक्तियाँ परमात्मा से मिलन की आकांक्षा में परिणत हो जाती हैं। इस अध्ययन में यह प्रदर्शित किया गया है कि किस प्रकार मीरा का काव्य वैष्णव भक्ति दर्शन, विशेषकर शुद्धाद्वैत एवं भक्तिमार्ग के सिद्धांतों से अनुप्राणित है। साथ ही वह सामाजिक रूढ़ियों एवं जातिगत पदानुक्रम का सशक्त प्रतिवाद भी प्रस्तुत करता है। उनके काव्य में 'ब्रह्म', 'आत्मा' एवं 'माया' जैसे दार्शनिक सिद्धांतों की सरल किन्तु प्रभावशाली व्याख्या मिलती है। यह पत्र मीरा के काव्य को एक ऐसी दार्शनिक पाठ के रूप में पढ़ने का प्रयास करता है। जीवन के सार्वभौमिक प्रश्नों—प्रेम, वैराग्य, मुक्ति एवं आत्म-साक्षात्कार—की ओर संकेत करता है।

बीजशब्द - मीराबाई, भक्ति आंदोलन, माधुर्य भाव, आध्यात्मिकता, दर्शन, सामाजिक प्रतिरोध, सूफी प्रभाव, मुक्ति।

प्रस्तावना-

मध्यकालीन भारत का भक्ति आंदोलन सामाजिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक पुनर्जागरण का एक महत्वपूर्ण युग था। इस आंदोलन ने जहाँ एक ओर रूढ़ियों को चुनौती दी, वहीं दूसरी ओर ईश्वर तक की सीधी पहुँच के लिए 'भक्ति' को सर्वोच्च मार्ग घोषित किया। इसी परिवेश में राजस्थान के मेड़ता में जन्मी राजपूत राजकुमारी मीराबाई (1498-1547 ई.) एक ऐसी विलक्षण व्यक्तित्व के रूप में उभरीं। जिन्होंने अपने काव्य के माध्यम से न केवल आध्यात्मिक प्रेम की एक नई परिभाषा गढ़ी, बल्कि सामंती पितृसत्तात्मक समाज के नियमों को भी ध्वस्त किया। अध्यात्म, दर्शन, धर्म, साहित्य एवं लोकजीवन के विविध विद्वानों और मनीषियों ने भक्त कवियित्री मीराबाई का अपनी-अपनी तात्विक दृष्टियों से आकलन किया है। आचार्य रजनीश ने मीरा को तीर्थंकर की संज्ञा दी तो गीता के महान चिन्तक स्वामी रामसुखदासजी उन्हें भक्ति और विरह की प्रतिमूर्ति बताते हैं। मीराबाई की भक्ति, जीवन-दर्शन, एवं जीवन-मूल्यों का सर्वाधिक प्राचीनतम और प्रामाणिक उल्लेख भक्तमालकार नारायणदास नाभा ने अपनी भक्तमाल में किया है जो एक प्रकार से मीरा के भक्ति-दर्शन को समझने का प्रवेशद्वार है। रोहिणी अग्रवाल के मीरा के बारे में लिखती है - "मीरा के पदों को यदि आध्यात्मिकता के कुहासे से मुक्त कर दिया जाए, तो वे जीवन के राग, उल्लास, उत्सव और ठाट-बाट के साथ एन्द्रिकता के उद्दाम का भी संस्पर्श करते हैं। घोर लौकिकता के बीच घोर शृंगारिक बाना।"

मीरा की आध्यात्मिकता का केंद्रीय स्वर श्रीकृष्ण के प्रति अतिशय अनुराग है। जो 'माधुर्य भाव' की सर्वोच्च अभिव्यक्ति है। यहाँ भक्त (मीरा) स्वयं को प्रेमिका (नायिका) और ईश्वर (कृष्ण) को प्रेमी (नायक) के रूप में देखती हैं। यह प्रेम सांसारिक प्रेम के समानांतर चलता हुआ प्रतीत होता है। लेकिन उससे कहीं अधिक गहन, अमर और परमार्थिक है। उनकी भक्ति भोग की नहीं, त्याग और समर्पण की है।

म्हारो तो गिरधर गोपाल, दूसरों न कोई।
दूसरो ने कोई साधां, सकल लोक जोई।।[1]

इस पद में मीरा कृष्ण को अपना एकमात्र स्वामी घोषित करते हुए सांसारिक पति के बंधन का निषेध करती हैं। यह आध्यात्मिक विवाह (सौलह संस्कारों में से एक) का प्रतीक है, जहाँ जीवात्मा का परमात्मा से मिलन होता है। यह प्रेम उनकी साधना का आधार है, जो विरह भावना की तीव्र पीड़ा से होकर गुजरता है।

कृष्ण अनुरागी मीरां के गेय पदों का आधार सामवेद ही माना गया है। मीरा ने अपना संपूर्ण काव्य गीतों में, पदों में, हरजस में इत्यादि पद्धति को गेय युक्त बनाया है। वस्तुतः मीरां के काव्य पर समस्त वेदों में से सामवेद का प्रभाव सर्वाधिक देखने को मिलता है। मीरां राग बिलावल पद्धति में कहती है कि-

मीरां कहे प्रभु तुम्हारे दरशन से,
मिट जाये चौरासी की चिंता।।[2]

भक्तिकाल में गेयता का सीधा संबंध सामवेद से न होकर लोक शास्त्र से हैं। पर शास्त्रीय गेयता में सामवेद के रूप में देखा जा सकता है। भक्तिमती मीरां बचपन से ही श्रीकृष्ण की भक्त प्रेमी थी, श्रीकृष्ण के गीत गाती थी। इसी गेयता के कारण मीरां लोक में नारी शक्ति की प्रेरणा बन गई। यद्यपि वे आज नहीं है परंतु वे हमारे लिए एक समृद्ध भक्ति-साहित्य की धरोहर छोड़ गई है जिसे उन्होंने रच-रचकर गाया और उसके द्वारा अपना ही नहीं अन्य भक्तों के मार्ग को स्पष्ट किया। उसके काव्य में सांसारिक बंधनों का त्याग तथा ईश्वर के प्रति समर्पण का भाव मिलता है।

*मीरां के अनुसार कोई सत्य है तो केवल 'गिरधर गोपाल' जो कि एकमात्र सहायक है और भव-सागर के पार उतारने वाले खेवनहार हैं।*3 गेय पद्धति से युक्त शास्त्रीय ग्रंथ सामवेद के आधार पर मीरां और श्रीकृष्ण के प्रति गेय पद में अभिव्यक्त भाव-

मैं तो गिरधर के घर जाऊँ।
रैण दिनां बाके संग खेलूँ, ज्यूँ बाहि रिझाऊँ।
जो पहिरावै सोई पहिरूँ, जो दे सोई खाऊँ।
जहां बैठावें तितही बैठूं, बेचे तो बिक जाऊँ। [4]

मीरां ने अपने पदों में जीवन की नश्वरता, गुरु की महिमा, सत्संग की महानता को उजागर किया है। जीवन क्या है? यही बात बहुत सरल एवं सरस लोक भाषा में समझायी है। जैसे-

काया नगर रे ओळे दोळे, ज्ञान पपईयो बोले रे
कागज री एक नाव बनाई, धरी गंगाजल मांई रे
करमी धरमी पाप ऊकारीया, पानी नाव डुबोई रे
जान पपईयो बोले रे

.....

बाई मीरां ने गिरधर मिळिया, मन की रह गई मन में रे। [5]

इन्हीं वेदसम्मत मीरां ने अपने आराध्य श्रीकृष्ण में ही समस्त वेदो का सार बताते हुए कहा कि-

दरद की मारी वन-वन डोलूँ, वेद मिला नहिं कोय।
मीरां के प्रभु पीर मिटै जब, वेद साँवलिया होय।[6]

वस्तुतः यह कहा जा सकता है कि 'वेद' में अनुभवों का सत्य छिपा हुआ है जिसकी रत्नगर्भा से लोक का प्रत्येक प्राणी प्रेरित होता है। भावों से भरी भूमि को भारतीय आध्यात्मिक में वेदों से सुशोभित किया गया है। यही वेद सच्चे अर्थो में जनमानस है, जनमंगल है। वेद समस्त ज्ञानराशि के अक्षय भण्डार हैं। इतना ही नहीं हम भारतीयों की प्राचीन सभ्यता, संस्कृति और धर्म के आधारभूत स्तंभ हैं। समस्त जन-मानस इन्हें अतिशय आदर-सम्मान एवं पवित्रता की दृष्टि से देखता है। मीरां के काव्य में अप्रत्यक्ष रूप से ही सही परंतु भारतीय दर्शन के वेदों का प्रभाव स्वतः दिखलाई पड़ता है, ये इनकी महानीयता है।

हरि मेरे जीवन प्राण अधार।
और आसिरो नाहिन तुम बिन, तीनूं लोक मंझार
आप बिना मोहि कछु न सुहावै, निरख्यो सब संसार....।। [7]

जीवन में उपासना का विशेष महत्त्व है। जब मनुष्य अपने जीवन का वास्तविक लक्ष्य निर्धारित कर लेता है, तब वह तन-मन-धन से अपने उस लक्ष्य की प्राप्ति में संलग्न हो जाता है। भक्तिमती मीरां ने पुराणसम्मत ज्ञान के आधार पर श्रीकृष्ण की एकनिष्ठ भक्ति की। इस संबंध में मीरां के काव्य में कहा गया है कि-

मोहि लागी लगन गुरु चरण की।
चरण बिना कछुवैं नहीं भावै।
.....
आस वही गुरु सरनन की।।[8]

भक्तिमती मीरां ने भी महलों को त्यागकर साधु-संतों की मंडली में रहना एवं भजन गाना शुरु किया। इस शिव पुराणसम्मत मीरां के काव्य में देखा जाता है कि-

महल तो मालिया राणा काम न आवे म्हारे।
टूटी झुपड़ियाँ मन भावे। [9]

इस प्रकार कहा जा सकता है कि मीरां के काव्य में टूटी झोपड़ियाँ, कड़वी तूमड़ियों, खाटी राबड़िया, फाटी कामलिया इत्यादि शब्दों का आना शिव के माहात्म्य का पूर्ण प्रभाव माना गया है। शिव पुराण के प्रभाव से ही मीरां सरलता एवं सादगी को अपनाकर जीवन भर श्रीकृष्ण की भक्ति आधार बनाया।

भक्त शिरोमणि मीरां ने अपने जीवन को पूर्व मीमांसा दर्शन के अनुसार जीया। वे जीवन धर्म मानकर अपने कर्तव्य पथ पर आगे बढ़ती रही। इस संबंध में सत्यवादी राजा हरिश्चंद्र, पाँच पांडव तथा द्रोपदी का उदहारण देती हुई मीरां अपने पदों में कहती है कि-

करम गति टारे नाहिं टरे।
सतबादी हरिचंद से राजा, नीच घर नीर भरे।
पाँच पांडु अरु सती द्रोपदी, हाड़ हिमालै गले।
.....
मीरां के प्रभु गिरधर नागर, बिख से अमृत करे। [10]

बाल्यकाल से ही मेड़ता(राजस्थान) के चारभुजा मन्दिर से मीरा का ऐसा घनिष्ट संबंध स्थापित हो गया कि वह खेल-खेल में ही भगवान के दिव्य विग्रह को अपने चक्षु में बसा बैठी। भक्त कवयित्री मीरां को भौतिक आकर्षण कभी लुभा ना सके। वह तो अलौकिक ईश्वर के एकनिष्ठ प्रेम से ही बंधी रही। परिणामस्वरूप संघर्षों का दौर शुरू हुआ और इन्ही संघर्षों से मीरा के अलौकिक प्रेम के दर्शन एवं भक्ति-दर्शन कि पृष्ठभूमि विकसित हुई। मीरा ने स्वयं को अचल सुहागिन माना क्योंकि अपने दिवंगत पति के साथ सती होने के बजाय दृढ़ता से उद्घोषणा की 'गिरधर गास्याँ सती न होस्याँ, मन मोह्यो घणनामी' अर्थात भगवान श्री कृष्ण की परिणिता माना। मीरा का जीवन-दर्शन धारा के प्रतिकूल जीवन जीने का दर्शन था।

निष्कर्ष-

मीराबाई का काव्य आध्यात्मिकता एवं दर्शन का एक अद्वितीय संगम है। उन्होंने जटिल दार्शनिक सिद्धांतों—जैसे सगुण-निर्गुण ब्रह्म, अद्वैत, भक्ति मार्ग, शरणागति—को सरल, गेय एवं हृदयस्पर्शी पदों में ढालकर उन्हें जन-जन तक पहुँचाया। उनकी आध्यात्मिकता का केंद्र 'प्रेम' है। जो विरह की पीड़ा से होकर गुजरता हुआ परम मिलन की अनुभूति तक पहुँचता है। यह प्रेम न केवल ईश्वर के प्रति है, बल्कि समस्त मानवता एवं सृष्टि के प्रति करुणा में भी विस्तारित होता है। दार्शनिक स्तर पर मीरा ने जाति एवं सामाजिक हैसियत के आधार पर भेद करने वाली व्यवस्था को निरर्थक सिद्ध किया। उनका जीवन और काव्य इस सत्य का प्रमाण है कि आध्यात्मिक साक्षात्कार का मार्ग किसी भी बाह्य आडंबर या सामाजिक बंधन से परे है। उन्होंने स्त्री की आध्यात्मिक स्वायत्तता को एक नई पहचान दी और सिद्ध किया कि भक्ति का पथ सभी के लिए खुला है। मीरा का काव्य आज भी प्रासंगिक है क्योंकि यह मनुष्य की अंतर्निहित स्वतंत्रता, प्रेम की शक्ति और आत्म-साक्षात्कार की अनिवार्यता की ओर संकेत करता है। उनकी वाणी में निहित आध्यात्मिक गहराई एवं दार्शनिक सूझबूझ उन्हें केवल एक कवयित्री नहीं, बल्कि एक विचारक एवं समाज-सुधारक का गौरव भी प्रदान करती है। इस प्रकार, मीराबाई का काव्य भारतीय चिंतन परंपरा में एक ऐसा मील का पत्थर है जो भक्ति को दर्शन से और दर्शन को जीवन से जोड़ता है।

****

सन्दर्भ:-

1. ब्रजेन्द्र कुमार सिंहल : मीरांबाई प्रामाणिक जीवनी एवं मूल पदावली, पृ. 167
2. नंद चतुर्वेदी : मौरां संचयन, पृ. 72
3. पेमाराम : मध्यकालीन राजस्थान में धार्मिक आंदोलन, पृ. 181
4. पेमाराम : मध्यकालीन राजस्थान में धार्मिक आंदोलन, पृ. 181
5. भुवनेश जैन : भीलों के लोक गीत, पृ. 155
6. नंद चतुर्वेदी मीरां संचयन, पृ. 150
7. हरिनारायण पुरोहित : मीरां वृहत्पदावली, भाग-1, पृ. 321
8. हरिनारायण पुरोहित : मीरां वृहत्पदावली, भाग-1, पृ. 85
9. नंद चतुर्वेदी : मीरां संचयन, पृ. 43
10. नंद चतुर्वेदी : मीरां संचयन, पृ. 105